तरुण-भारत-ग्रन्थावली—सं० ३७

निःश्वास

लेखिका
रामकुमारी चौहान

प्रकाशक
तरुण-भारत-ग्रन्थावली-कार्यालय
दारागंज, प्रयाग

प्रथमावृत्ति } सं० १९९२ { मूल्य ॥=) आन

भूमिका

श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान तथा श्रीमती महादेवी वर्मा ने कविता के क्षेत्र में सफलता प्राप्त करके अन्य बहनों के लिए इस क्षेत्र में जो मार्ग प्रशस्त किया है, हम देखते हैं कि उस स्थिति से लाभ उठाने से वे नहीं चूकीं। यही कारण है कि आज कई एक देवियाँ हिन्दी में उच्च कोटि की रचनायें कर राष्ट्रभाषा के भाण्डार को पूर्ण करने के लिए यत्नवान् हैं। श्रीमती रामकुमारी चौहान उनमें एक हैं। उनके इस संग्रह में जो रचनायें संग्रह की गई हैं उनके आकलन से हमारे कथन का सम्यक् रूप से समर्थन होता है। श्रीमती चौहान की इन सभी रचनाओं में कवित्व का दर्शन होता है। क्या शब्द-योजना, क्या लालित्य और क्या भावधारा, कविता की ये तीनों विशेषतायें श्रीमती जी की इन रचनाओं में पूर्ण रूप से विद्यमान हैं और इन सब में करुण-रस का जो परिपाक हुआ है वह श्रीमती चौहान को कविता-क्षेत्र की प्रथम पंक्ति में आसीन कर देने के लिए पर्याप्त है। हमें आशा है कि श्रीमती जी के हृदय में कविता की जो वेदना-पूर्ण भावधारा लहराती है उससे हमारी राष्ट्र-भाषा का रिक्त भाण्डार अलंकृत ही न होगा, किन्तु उसकी गौरव-वृद्धि भी होगी। कविता-प्रेमियों को चाहिये कि श्रीमती चौहान की इस सौन्दर्य-पूर्ण प्राञ्जल रचना का अवलोकन कर उन्हें प्रोत्साहन प्रदान करें।

देवीदत्त शुक्ल

१४ अक्टूबर १९३५

प्रयाग

कुछ मेरी भी

१९२९ में जीवन में एक भीषण तूफ़ान आया। उस तूफ़ान के प्रबल झकझोरों ने सुख की नौका उलट दी। दृग-सागर ने जीवन-सर्वस्व अपने में विलीन कर लिया।

निःश्वासों ने अपना खेल खेलना शुरू कर दिया। शैशव के वसंत में जो कविता-लता पली थी उसका पतझड़ हुआ। आशा-उषा की लालिमा ने निराशा की साड़ी पहनी और रोने लगी।

प्रस्तुत **'निःश्वास'** में उसी वाटिका का दुखद दृश्य है, जिसमें शायद वसन्त फिर कभी न लौटे—शायद जिसमें कोकिला फिर कभी न कूके !

यह रोना है ; रोना किसे अच्छा लगेगा ? कौन इस रोने पर अपनी सहानुभूति प्रकट करेगा ? ······कोई नहीं,······ केवल तू !

इन आहों को आश्रय देकर श्री कुँवर गजराजसिंह जी परिहार, एम० ए०, ने और अधिक रोने के लिये प्रोत्साहित किया। एतदर्थ उनको हार्दिक धन्यवाद है। भाई कवीन्द्र सेवकेन्द्र जी ने भी इस रोने के एक एक कण को बटोर कर अश्रु-माला तैयार की है। इसके लिये मैं उन्हें भी धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकती।

रामकुमारी चौहान

समर्पण

प्राणधन* !

तुम चले गये, अच्छा ! तुम्हारी इच्छा ! किन्तु क्या यह निःश्वास तुम्हारा साथ छोड़ेगी ?

दग्ध-हृदय-निःसृत निःश्वास,
निज सौरभ में कर लो लीन ।
ओ मेरे जीवन-निःश्वास !
दृग-जल-इच्छुक है मन-मीन ॥

तुम्हारी दुःखदग्धा

---

*लेखिका के पति स्वर्गीय कुँवर रतनसिंह चौहान (बी० ए०, एल-एल० बी०)

विषय-सूची

निःश्वास

मातृ-वन्दना

जिस पर सदा निछावर करती,
शशि आभा उजियाली ।
रवि अङ्कित करता जिसकी,
किरणों से छटा निराली ॥
प्रकृति सखी हिमकण भर भर कर,
मुकुलित माँग सजाती ।
ऊषा ले ले मंजु महावर,
चरणों पर रच जाती ॥
स्वागत हित पुलकित प्रसून,
प्याली मधु भरी लुटाते ।
मधुकण अलिगण मुखरित होकर,
क्षण क्षण में छलकाते ॥

व्योम-विचुम्बित धवल धामहिम,
भूधर उच्च खड़ा है।
मंजुल मणि-खनियों से पूरित,
वैभव चढ़ा-बढ़ा है॥

चरणाम्बुज नहलाने को है,
भागीरथी उदारा।
दुख-विनाशिनी सुख-प्रकाशिनी,
जिसकी अनुपम धारा॥

सिंधु-सीप के लेकर मोती,
लहरें हार सजातीं।
गुलिक-कान्ति से जिस ग्रीवा की,
शोभा सुखद बढ़ातीं॥

उस भारत जननी के चरणों—
पर जग के सुख सारे।
लुट जाने दो हँसते हँसते,
जीवन-वैभव प्यारे॥

इसका गुण-गण मान बने,
यदि जीवन गान हमारा।
प्राणों की बलिदान-दीप्ति से,
चमक उठे यह तारा॥

———

आशा-किरण

शोक-सिंधु-संभूत गुलिक शुचि,
शुक्ति-निर्मिता नव प्याली ।
आशाओं के इन्द्र-धनुष से,
रंग - रंजिता कर डाली ॥

तरल वेदना की भरती,
रहती हूँ मृदु मादक हाला।
विद्रुम सी गुलाब सी लाली,
लख होता मन मतवाला॥

सुख-दुख राग-विराग आदि की,
फूट पड़ी फेनिल लाली।
भरती हूँ मैं बूँद बूँद वह,
छलक छलक होती ख़ाली॥

मेरी विफल कामनायें,
आशा दीपक से जल जातीं।
कुछ विरक्ति अनुरक्ति जगत की,
कुछ निर्मम छवि बन आतीं॥

स्वप्निल अभिलाषा आसव से,
यही सोच भरती प्याले।
कोमल प्रेम-विचुम्बित उर के,
बह न पड़ें छिल कर छाले॥

नेत्र कंज इस हेतु मंजु,
मुक्तावलियों को बिखराते।
स्वप्न-किरण के गगन-यान में,
लगन मगन मन-धन आते॥

लालसा

भिन्नतामय अतीत के गान,

उन्हीं की छेड़ सुरीली तान।

गूँजने दो मीठी झनकार,

सिहर जायें करुणा के प्राण ॥

चपल गति से जब बारम्बार,

भिन्न अँगुलियाँ छूतीं तार।

तभी स्वर भीना सुन्दर राग,

बहाता सरस सुधा की धार ॥

निःश्वास

कहती हूँ देव,

भिन्नता में अतीव आनन्द।

होना इस ओर,

न मिटने देना यह दुख-द्वन्द ॥

से अति प्यार,

वेदना है जीवन का सार।

के उद्गार,

इसी पर होने दो बलिहार ॥

क्षण में पर नाथ,

प्रणय-पीड़ा का भरना भार।

अद्भुत अनुराग,

झलकता हो पावन शृङ्गार ॥

वियोग का हास,

बने विच्छेद मिलन का रास।

ी हँसती मौन,

मिटाती रहे हृदय की प्यास ॥

कुलता का राग,

तप्त उच्छ्वासों का अवसाद।

जाने दो यहीं,

विरहिणी का जीवन-उन्माद ॥

———

आगमन

मेरे स्वर्णिम सुख सपने,
तारों में हँसते आये।
जीवन ऊषा लाली में,
रहती मैं उन्हें छिपाये॥
लहरों में मैं मुसकाती,
आहों की ज्योति जगाये।

निःश्वास

मन की टूटी कुटिया में,
अपने अरमान छिपाये ॥

× × ×

तब हँस धुँधले जीवन में,
वे मंथर गति से आये ।
आशा बेसुध सोती थी,
पीड़ाओं को अपनाये ॥
कामना-कुसुम हँसते थे,
खिल खिल कर छवि छायेंगे ।
अभिलाषा चुपके चुपके,
कहती थी फिर आयेंगे ॥

× × ×

मेरी चञ्चल चिन्ता ने,
चाहों के दीप जलाये ।
ललचाई इन आँखों ने,
आँसू दो-चार बहाये ॥
भरकर मादक पीड़ा को,
इस जीवन की प्याली में ।
दुख सुख सा बन आया है,
उनकी अतीत लाली में ॥

———

निर्बल प्यार

देव ! कैसी विचित्रता - पूर्ण,
क्षणिक मानव-जीवन की बात ।
इसी में फँस प्राणी अनजान,
मान दुख-सुख करता उत्पात ॥

जटिल है इसकी उलझन गूढ़,
क्लेश में होता विस्मित मूढ़ ।

निःश्वास

वेदना में सुख का आनन्द,
गरल में लाता अमृत ढूँढ़ ॥

प्राण को चिर तृष्णा से प्यार,
आह में लुप्त प्रेम का क्षेम ।
विभो ! इस जीवन संसृति-बीच,
प्रकृति का क्या विचित्र है नेम ?

लालसा मिलन सींचती रहे,
हृदय-कानन के शुष्क प्रसून ।
रहे करुणा का अविचल राज्य,
बदलता अश्रुकणों में ख़ून ॥

कहाँ इस कोलाहल से दूर,
नाथ ! सुनना नीरव झंकार ।
जोड़ देना दृग-रस से देव !
विकल वीणा के टूटे तार ॥

पिघल बह जाये मन का मैल,
मिले विच्छेद-व्यथा उपहार ।
बिखरने दो चरणों पर नाथ,
दुखी का कोमल निर्बल प्यार ॥

संकोच

मन-मानस की मतवाली,
सुन मधुर प्रेम की तानें ।
अलसायी अभिलाषों में,
नव जीवन-ज्योति जगाने ॥

सूखे मरु हृद-प्राङ्गण में,
जीवन का स्रोत बहाने ।

निःश्वास

उलझी सी वीणा के,
तारों को फिर सुलझाने ॥

आई हूँ आवाहन करने,
खोई विस्मृतियों का ।
मधुमय रस - राग सुनाने,
श्वासों की नव कृतियों का ॥

आशा की मुरझाई कलियाँ,
अपनी आज खिलाने ।
नयन-चकोरों को लाई हूँ,
शशि से आज मिलाने ॥

हो मद से मदमाती फिर,
मैं चली सुधा बरसाने ।
प्राणों की बलिवेदी पर,
करुणा के कण दरसाने ॥

कोमल चरण-कमल पर,
कैसे बोझिल भेंट चढ़ाऊँ ।
जाता हृदय संकुचित होता,
सेवा में क्या लाऊँ ॥

मिलन

स्वप्नों की तरल हँसी में,
आशा के आलिङ्गन में;
जीवन - सन्ध्या के वन में,
भालों के मृदु चुम्बन में।
मानस की भग्न कुटी में,
आलोकित प्रेम सिता में;
जग की मोहक ममता में,
आहों की तप्त चिता में।
विस्तीर्ण गगन-प्राङ्गण में,
शशि की शीतल किरणों में;
उच्छ्वासों के कम्पन में,
मलयानिल की अलकों में।

निःश्वास

सुप्त अतीत रजनी में,
मृदु जल की फुलझड़ियों में ;
वेदना भरे जीवन की,
नीरव निराश घड़ियों में।
उस निठुर प्रणय-पीड़ा की,
धुँधली सी चित्रपटी में ;
विश्वासों के क्रन्दन में,
उजड़ी सी पञ्चवटी में।
मुसकान भरी तारों की,
उस मृदुल हँसी के वन में ;
मैं थी वेदना छिपाये,
नीरव नीरद सी मन में।
जीवन की जटिल समस्या,
इस सूनेपन में आई ;
मेरे उजड़े मानस में,
आशा ने ज्योति जगाई
मन सिहर उठा प्राणों ने,
पथ पर पाँवड़े बिछाये
मेरी टूटी कुटिया में,
तब वे मुसकाते आये।

———

जीवन-प्रभात

प्राची निज स्वर्णांचल से,
बिखराती आती रोली।
उस पर मचली पड़ती हैं,
नव विकसित कलियाँ भोली॥

पलकों को खोल दिखाते,
पल्लव मधु कोष निराला।

मतवाला जहाँ छलकता,
मादक हिमकण का प्याला ॥

धीरे से शिशु-सुमनों को,
आ मलय समीर जगाती ।
परिमल-प्रवाह में प्रमुदित,
हो नहलाती बहलाती ॥

अलकों में बाल दिवाकर,
अनुराग रंग भर लाया ।
जग-इतिहासों की अंकित,
है जिसमें जगमग माया ॥

हो म्लान स्वप्न-लोकों के,
आशा-दीपक बुझ जाते ।
मधुकर उन्मत्त स्वरों में,
कुछ अस्फुट गान सुनाते ॥

मुस्काते कंज मनोहर,
नव प्रतिभा उजियाली में ।
विहसित उल्लासित ऊषा,
आती है इस लाली में ॥

———

विभ्रम

किस चिर अतीत का मधुर गान—

आया बनकर सुस्मृति वसन्त।

किसकी करुणा का नव विहाग—

भर गया व्यथा का स्वर अनंत॥

किस हृदय क्षितिज से गल गलकर,
अनगिन हिमकण पल पल झरते।
किस नेत्र-कंज के विमल कोष को,
रजत ओस से हैं भरते॥

किसके वियोग की मूक हूक,
भ्रमरावलि सी आ मँडराती।
जो हृदय-सुमन का मधुपराग,
नयनों के द्वार लुटा जाती॥

पुलकित रसाल पल्लवित प्रेम,
आशाओं से मृदु खेल खेल।
कल्पना-कुसुम का कर विकास,
भर जाते जग का सुख सकेल॥

दारुण वियोग की विषम पीर—
मलयज समीर सी झूम झूम।
पंकिल निर्झर सी आँखों को,
मुग्धा सी जाती चूम चूम॥

क्या है यह? स्वप्निल मधु प्रभात,
अथवा भूली सी विषम पूर्ति।
विच्छेद भरी श्यामा निशि में,
जो आती है बन मिलन-मूर्ति॥

पश्चात्ताप

सुन्दर सुस्मित स्वप्नों ने,
तारों के कुसुम हँसाये।
मैं हृदय - गगन में अपने,
रहती हूँ उन्हें छिपाये॥

निःश्वास

मानस की व्यथित हिलोरें,
आहों से हैं लहरातीं।
अरमानों की मृदु कलियाँ,
सहसा झुलसा सी जातीं॥
इस जगी हुई निद्रा में,
रोदन ही गाता गाना।
टूटी वीणा ने चाहा,
निज तारों को सुलझाना॥
अरुणाञ्चल में रंजित है,
मेरे जीवन की लाली।
आशा ओढ़े बैठी थी,
रजनी की चादर काली॥
आये वे मधुर - स्मृति से,
मेरे नयनों के द्वार।
झिल-मिल झुक महि तक,
झूमें मुक्तों के बन्दन वार॥
प्यासी पी - रूप - सुरा की,
निज निधि न नेक पहचानी।
अब अँखियाँ क्यों पछतातीं,
पहले बनकर दीवानी॥

संध्या-बेला

जर्जर जीवन - वीणा पर,
यह विकल रागिनी गाते।
युग युग जीते हैं योगी,
प्राणों को अलख जगाते॥

निःश्वास

नीरव भाषा में जग को,
निर्मम की कथा सुनाते ।
निज व्यथा उद्धि में प्रति पल,
डूबते और उतराते ॥

ठंडी आहों की लहरें,
दिखलातीं कलित किनारा ।
वेदना सजनि आती है,
देने को मुझे सहारा ॥

इस अतल जलधि में खोया,
नन्हा सा प्रणय हमारा ।
अब कैसे उसको पाऊँ,
वह डूब गया बेचारा ॥

पानी कितना गहरा है,
इसको पगली क्या जाने ।
जो पानी पानी होती,
वह पानी (को) क्या पहचाने ॥

आशा - विहगावलि चलदी,
उखड़ा मुदमय मधु मेला ।
चुपके आई पतझड़ सा,
जीवन की संध्या - वेला ॥

कल्पना-कानन में जब कभी,
कूकती है कोकिल अनजान,
सुप्त हृद्योत्पीड़न हा जाग,
अचानक भर जाते तूफ़ान ॥
मौन मन के चातक की चाह,
काल-निशि ने लूटी सुखमान।
हुआ था उसमें बेसुध किसी—
लालसा का दुखप्रद बलिदान ॥
मिलाकर मादक मदिरा मोह,
दिखा निज माया का व्यापार।
नाथ उन्मत्त बनाते रहे,
यही था सेवा का उपहार ॥
अमित अगणित कितने कै बार,
मञ्जु मन मानस के सुकुमार।
बिछाये मग में विकसित फूल,
किन्तु वे झुलस बने अंगार ॥
वेदना मन-प्राङ्गण में मधुर,
खेलती है वह मञ्जुल मूर्ति।
उसे फिर क्यों न समझ लूँ आज,
मिलन की सुखद घड़ी की पूर्ति ?

त्याग

क्षीण वीणा के टूटे तार,

शून्य वह नीरवता का चित्र ।

कर गये आशा का संचार,

चेतना भर चल चपल विचित्र ॥

वही बेसुध का मेरा मिलन,

मिल सकेगा क्या बारम्बार ?

भग्न मानसः का खोया प्रणय,

सरल मन का निर्मल उद्‌गार ॥

निरस जीवन की वह असहाय,

आँसुओं की थोड़ी सी भीख ।

झिलमिली आशा झिलमिल ज्योति,

और सुखमय जीवन की सीख ॥

व्यथा में कर पीड़ा से प्यार,
करेगा कैसे पथ निर्माण ?
गड़े हैं पग पग पर वे शूल,
गहन है स्मृतियों का उद्यान ॥
नाथ विस्मृति-नौका किस भाँति,
करेगी करुणोदधि को पार।
भरा है चिर तड़फन में यहाँ,
सरल रोदन का हाहाकार ॥
लालसा का उन्मद उल्लास,
बढ़ रही दृढ़ अशांति की क्रांति।
अन्त की अस्थिरता में व्यर्थ,
ढूँढ़ता मन जीवन की शांति ॥
आह! वह सुख-स्वप्नों का शोध,
छिपा जा फिर अनन्त की छोर।
वेदना बनी भाफ छा गई,
उड़ा जीवन ही उसकी ओर ॥
प्रेम का यह पागल उन्माद,
करुण क्रन्दन का गाकर राग।
मृत्यु सी मादकता को ढाल,
कराता स्वर्गिक सुख का त्याग ॥

मुसकान

चन्द्रानन प्रतिभा सा मञ्जुल,

मधुमय मृदु मृदु मुसकाना।

नव जीवन सा डाल गया है,

सरस सुधा सा बरसाना॥

पुष्पावलि सी सौरभमय,
मादकता सरिता उमगाई।
उसमें ही मन डूब गया,
कण कण में नव उमङ्ग आई॥
था अनुराग राग-रञ्जित सा,
जो इस जीवन का प्याला।
मन-मानस के सुमनों की,
उसमें गुथ गई प्रेम-माला॥
मिल मिल तरल तरंगों में,
वह सरल विरल लहराती है।
नैन-बिन्दु के विपुल सिन्धु में,
सहसा घुलती जाती है॥
सस्मित प्रेम पुजारिन हूँ,
रखना मत साध अधूरी तुम।
जो आशायें शेष रहीं,
उनको कर देना पूरी तुम॥
क्रन्दन बनकर विषम व्यथायें,
मिल जायें मेरे मन में।
मिट जाये विच्छेद-वेदना,
स्मृति की उलझन-सुलझन में॥

मुक्ताभा

तारों की तरल हँसी में,
विकसित विषाद - रेखा है।
शशि - ज्योत्स्ना मधुर मिलन में,
विच्छेद - चित्र देखा है ॥

ऊषा में अन्तर्हित इस,
हृदयस्थल की लाली है।
जो अरुण रक्त-रंजित सी,
भरती मादक प्याली है॥
सरिता सी उमड़ उमड़कर,
मानस की विषम व्यथायें।
ले हृदय-सिंधु के मोती,
दृग-सीपी से बरसायें॥
ये इस निर्धन जीवन के,
संचित अमूल्य मोती हैं।
धुँधली अतीत की स्मृतियाँ,
इनमें बेसुध सोती हैं॥
कण कण से छलक रही है,
मेरी दुख-भरी कहानी।
सुरभित समीर चुपके से,
बरसा जाती है पानी॥
जब आशा घन-मण्डल से,
जल-कण गिरते घुल घुल के।
तब चमक चौगुनी होती,
इन मुक्तों की धुल धुल के॥

———

अर्न्तदाह

जिनके शोणित - सिंचन से,
है जीवन की हरियाली।
उनको ही हँस हँस हमने,
निष्ठुर पीड़ा दे डाली॥

वे शीत - घाम में निश्चल,
गलते हैं अङ्ग तपाते॥
हिम-कण से ठिठुर ठिठुरकर,
श्रम - कण बन घुलते जाते।

उनके सूखे अंगों में,
चिंता का चित्रण देखा॥
उनके मुरझाए मुख पर,
है खचित हास्य की रेखा॥

वे अपनी व्यथा छिपाये,
रहते हैं उर - कानन में॥
जो प्रकट नहीं होती है,
गम्भीर धीर आनन में॥

उस हृत्तल में जलती है,
दारुण दरिद्र की ज्वाला।
जिसमें खेला करता है,
उनका जीवन मतवाला॥

शिशु सिसक सिसक रोते हैं,
दाने दाने के लाले।
माताएँ मुख तकती हैं,
आहत हो हृदय सँभाले॥

निर्झर से झर झर झरते,
भरते हैं दुख-दृग-प्याले।
करुणा से फूट पड़े हैं,
उनके अन्तर के छाले॥

साहस से ऋण ले लेकर,
पर-सुख-हित नित मरते हैं।
चिर रक्तपात से अपने,
वे विश्व-उदर भरते हैं॥

जिनने जग-सुख हित अपने,
स्वर्गीय सौख्य बाँटे हैं।
उनके जीवन-पथ में हम,
बो रहे हाय काँटे हैं॥

———

मेरा शैशव

मेरी अतीत शैया पर,
वह शैशव शिशु सोता है।
नीरव निशि के अंचल में,
पा व्यथा मुग्ध होता है॥

मैं गर्वित हो निज सुख का,
सारा साम्राज्य लुटाती।
इस शुष्क मरुस्थल में भी,
जीवन की ज्योति जगाती॥

विकसित प्रभात प्रतिभा से,
उल्लसित जगत हो जाता।
पर शिशु-जीवन की मुरझी,
वह कली न विकसा पाता॥

इस भग्न हृदय की वीणा,
झंकरित नहीं होती है।
उच्छ्वासों की चादर में,
कुछ सिसक सिसक रोती है॥

स्वप्नों की तरल हँसी में,
वह कसक छिपी रहती है।
जो विषम वेदनाओं की,
सरिता सी बन बहती है॥

मन पागल सा होता है,
तज सभी जगत का नाता।
तब भारी भूकम्पन सा,
इस हृदयस्थल में आता॥

लहरों में मुसकाती है,
वह मेरी करुण कहानी।
रजनी-तारों के मिस आ,
बरसा जाती है पानी॥

ऊषा हिम-कण चुन चुन कर,
भरती मादक प्याली में।
आशा - पंकज खिलते हैं,
अरुणोदय की लाली में॥

कौन

कौन इस शून्य लोक में स्तब्ध,
सुनाता है अतीत की तान ,
बजाकर हृद्वीणा के तार,
जगा जाता सोये अरमान ?

नि:श्वास

कौन लघु मरु अन्तर में विपुल,
वेदना का भर पारावार,
लुटाता इस निर्धन को विहँस,
मनोरम मुक्ता-राशि अपार ?

कौन जीवन सरिता के पार,
नचाता है स्मृतियाँ छविमान ?
मौन क्रन्दन-विहाग में कौन,
आन भर जाता है तूफान ?

कौन आशा अवगुण्ठन खींच,
दिखाता मनहर मोहक वेश ?
कौन बस कर उजाड़ता निठुर,
हमारा नन्हा हृदय-प्रदेश ?

कौन झंझा-वियोग के संग,
गिराता मधुर मिलन का मूल ?
फेंक कर चित-चाहों पर धूल,
झोंकता है आँखों में धूल ?

ग्ध आहों से हुआ अतीव,
चेतना अपनी सारी भूल ।
आज बन रे मम मन अनजान,
उसी निर्मम पदतल की धूल

करुण मूर्ति

स्वर्ण लेखनी ले प्राची दिग्-
बाला जब मुसकाती।
कर अङ्कित अक्षर अक्षर से,
नव प्रकाश फैलाती॥
अध विकसित कलियों में,
अवसित रहते हैं वे मञ्जुल हास।
जिनमें झलमल चमक रहे हैं,
ग्रामीणों के मृदु इतिहास॥
अन्तर्हित पंखड़ियों में,
रहती उनकी जीवन-लाली।
रक्तिम आभा दरसाती है,
जिस विरक्ति की उजियाली॥

हिमकरण ढुलक ढुलक कहते हैं,
उनकी करुण कहानी को।
निर्झर बहा बहा जाते हैं,
दुखी दृगों के पानी को॥
अणु अणु से वे बुझते बुझते,
जीवन ज्योति जगा जाते।
कृश शरीर से कृषक जगत की,
निर्ममता दिखला जाते॥
जिनके रक्त-स्वेद से सिंच कर,
अनुपम बीज निकलते हैं।
जिनकी क्षुधा-पिपासा ही से,
वसुधा के जन पलते हैं॥
मन मसोस कर मौन रुदन में,
जीवन-संध्या है आती।
मरण-काल-पर्यन्त दैन्य-दुख,
से जलती जाती छाती॥
हैं उनके हम ऋणी किन्तु वे,
ऋणी बने बेचारे हैं।
मारे मारे वे फिरते जो,
ग्राम्य देवता प्यारे हैं॥

स्वप्निल प्रभात

उर प्राङ्गण में स्वप्नों को,
सम्मित स्वर्णिम अरुणाई।
आई झिलमिल रविकर सी,
आशा - कलिका - मुसकाई॥
मेरे मरु हृदय - स्थल को,
अभिलाषाओं ने सींचा।

धूमिल भविष्य निशि-पट पर,
चञ्चल सुख चित्रक खींचा ॥

* * *

सुमनों से खेल रहा था,
मेरा जीवन मतवाला।
कण कण में झलक रही थी,
हिम-कण की हीरक-माला ॥
हृदयोदधि ने चुन मोती,
दृग-थालों बीच सजाए।
शत दल ने पल पल सुन्दर,
नीहार-हार नव पाए ॥

* * *

करुणा निज अवगुंठन से,
विष-निर्झर झर झर लाई।
वेदना विपुल विमुदा सी,
खिल खिल कर हँसती आई ॥
निर्मम क्यों तोड़ी तूने,
मुक्तामाला की लड़ियाँ ?
क्यों बिखरा दी पागल हो,
मुकुलों की मृदु पंखड़ियाँ ?

मेरा जीवन

यह मेरा लघु जीवन है,
कातर कारुण्य कहानी;
इसमें खेला करती है,
चिन्ता बन कर दीवानी।
चिन्ता की चंचल लहरें,
दुख गिरि से टकराती हैं;
वेदना वायु को छू कर,
सहसा बढ़ती जाती हैं।
व्याकुल कटती रहती हैं,
इन आँखों की वे रातें;
जिनमें असफल आशायें,
हैं मौन-मिलन की बातें।

आघात कठिन सहकर भी,
मृतवत् होकर जीती हूँ ;
कसकीली कसक छिपाये,
अपने आँसू पीती हूँ।

कल्पना करुण क्रन्दन में,
भावों की ज्योति जगाती,
धुँधले अतीत प्राङ्गण से,
मुग्धा सी हँसती आती।
सहचरी वेदना आती,
फिर छिपकर इतराती सी ;
अनुराग - राग में मीठी,
विच्छेद - व्यथा गाती सी।

आहों ने मन के वन में,
चिनगारी कहीं गिराई ;
होकर उदास इतने में,
जीवन - संध्या भी आई।
अब तक जिन आशाओं ने,
मानस में किया उजाला ;
अब भाग्य-चक्र ने उनको,
हा चूर चूर कर डाला।

आसव

रजनी आँक रही थी जग की,
निर्मम करुण कहानी।
तारागन बन कर कन कन कुछ,
छलकाते थे पानी।
मैं अपनी जीवन - वीणा के,
तारों को सुलझाने।
मूक वेदना की बैठी थी,
विफल रागिनी गाने।

जब निज जर्जर वीणा के,
तारों को सुलझाती थी।
तब इस सुलझन में उलझन,
क्रमशः बढ़ती जाती थी।
खेल रही थी नयनों में,
मेरे मानस की व्रीड़ा!
हृत - कम्पन में मुग्धा सी,
हँसती आती थी पीड़ा।

आशा नाच रही थी अधरों—
पर कुछ कुछ लाली में।
प्रेमासव भरती जाती थी,
मैं मादक प्याली में।

———

प्रणय-प्याली

निकल मानस निकुञ्ज से मंजु,

प्रणय का कोमल कंज पराग।

अचानक फँसा प्रेम के फंद,

गया अनुराग रंग में पाग।

लुट गया सौरभ सा सुकुमार,

अलौकिक सरस प्रेम अभिसार।

बिखर कर कहाँ गया अनजान,

हमारा कोमल नन्हा प्यार।

पल्लव द्रुम दल हँसते हैं,
मन मोहक पुष्प खिले हैं।
सब के शुभ सुकृत फलों के,
फल आकर आज मिले हैं।
हँस लाल कञ्ज रोली का,
सौभाग्य - चिन्ह लाया है।
परिमल का स्रोत बहाता,
सुख सरसाता आया है।
कोकिल मतवाली सी है,
मृदु स्वर में मंगल गाती।
अलि - अवलि सघन कुञ्जों में,
उन्मादक बीन बजाती।
मलयानिल थिरक थिरक कर,
मुद मद से मदमाती सी।
सौरभ का कोष लुटाती,
आती कुछ अलसाती सी।
आकर सुहाग की लाली,
प्राची दिशि मुस्काती है।
अनुराग रंजिता बाला—
सी इठलाती आती है।

प्रणय-बन्धन

ऊषा के नव प्राङ्गण में,
किरणों ने छटा दिखाई।
उपहार सुभग सुमनों का,
कोमल लतिका है लाई।
स्वागत को प्रकृति-नटी ने,
अगणित हिमकण बिखराये।
तज मानसरोवर को भी,
मंजुल मराल हैं आये।

मधुर कल्पना मूक थी किन्तु,
हृदय यह कहता था चुपचाप।
प्रेम के हे मतवाले प्राण,
पधारें मन-मन्दिर में आप।
भग्न अभिलाषा के चुन सुमन,
काँपते क्षीण करों से नाथ।
चढ़ाने को चरणों पर बढ़ी,
मिलन-आशा आतुर थी साथ।
खड़ी बेसुध सी तकती रही,
किंतु मन्दिर के टूटे द्वार।
बह पड़ी मर्म-व्यथा से भरी,
अचानक तरल विरह की धार।
कमल-चरणों पर अपने आप,
पुलक कर ढुलक पड़े अनमोल।
उन्हीं के प्रतिफल में हे देव,
मिला पीड़ा का दंड अतोल।
जिन्हें खोकर निर्धन को नाथ,
शून्य जँचता है यह संसार।
उन्हें ले मुसकाये, भर गये
प्राण प्याली में पीड़ा-सार।

कुसुम

आशा के निर्जन वन में बन,
'कुसुम कली' आई हो ।
बिखरी मम जीवन-निधियाँ,
सरले ! बटोर लाई हो ॥

इस हृदय-कुंज की तुमने,
मुकलित कलिका विकसाई ।
मृत उर-प्रदेश में तुमने,
अमृत की धार बहाई ॥

मैं तुमसे तुतलाती हूँ,
तुम मधुरालाप सुनाती ।
सन्ताप ताप हरती हो,
जब आती हो मुस्काती ॥

इस मधुर मन्द हँसने में,
सारा दुख सुख बन जाता ।
अनुराग-ऊर्मियों में मिल,
मेरा जीवन लहराता ॥

घटनास्थल से टकरा कर,
विगता स्मृतियाँ बेचारी ।
जो रुदन मग्न रहती थीं,
वे आज हँस रहीं सारी ॥

तव मधुमय शैशव लखकर,
मेरा शैशव फिर आता।
सन्ततिस्नेह लतिका का,
मंजुल अंकुर उकसाता॥

मेरे उजड़े कानन की,
तुम कोकिल हो मतवाली।
मेरी नैराश्य निशा में,
तुम शशि-ज्योत्स्ना उजियाली॥

चपला सुस्थिर होती है,
दंतों की द्युति दमकन में।
वह नव प्रकाश फैलाती,
नीरद उर घटा सघन में॥

मेरा शैशव शिशु तुम से,
हँस हँस कर खेला करता।
तज अखिल जगत से नाता,
मन प्रेम-सिन्धु से भरता॥

मेरे जीवन की तुम ही,
सुरभित प्रसून की डाली।
मेरे मानस-सर वर की,
हो मंजुल मृदुल मराली॥

अवशेष

चाहों की ज्वलित चिता से,
उठती दुख की चिनगारी;
उसमें जलती जाती हैं,
आशा की निधियाँ सारी।
निर्मम की निर्दयता में,
अपने अरमान जला के;
अब हृदय थाम बैठी हूँ,
वेदना-विभूति रमा के।

उल्लसित देख समझे हो,
तुम हँसने में सुख मेरा ;
पर इस झिलमिल अंबर में,
आहों का छिपा अँधेरा ।
मेरे अन्तर में धक धक,
दारुण ज्वालाएँ जलतीं ;
प्राणों की आहुतियाँ दे,
जीवन की घड़ियाँ टलतीं ।
मेरा पागल सा जीवन,
करुणा की बना कहानी ;
जिसमें हँस हँस निर्ममता,
करती रहती मनमानी ।
आशाएँ उर में व्याकुल,
हो सिसक सिसक रोती हैं,
उनके रोने में मेरी,
सुख की घड़ियाँ सोती हैं ।
वञ्चित मत होने देना,
प्रियतम इस मधु पीड़ा से ;
बहला लेने दो अन्तिम
क्षण ही क्षण इस क्रीड़ा से ।

अरुणे !

अरुणे ! भरने लाई हो,
किसके, हृद्यस्थल में लाली।
मुग्धमना किस पर हँस हँस कर,
छलकाती पंकज - प्याली ॥

प्रकृति-पुंज किस हृदय-कुंज को,
विकसित करने जाती हो ?
किसके सूखे मरु-प्रदेश में,
जीवन - स्रोत बहाती हो ?

अति विशाल किस भव्य भाल के,
तिलक-हेतु मंजुल रोली।
लेकर प्राची से मुसकाती,
आती हो सरले ! भोली !

प्रकृति-नटी के रंग-मंच पर,
खेले सोने का संसार।
स्वर्ण-कान्ति की निखिल वृष्टि से,
भर जाये जग का भाण्डार !

यही सोच कर क्या अपनी,
सोने सी निधि बिखराती हो ?
निर्धन महि पर क्या दुखियों को,
अपना स्वर्ण लुटाती हो ?
क्या रवि की किरणों से अंकित,
करने को जग के इतिहास,
रक्तिम मसि से लिख जाती हो,
आँसू दुख के सुख के हास ?
दीन देश है अरे यहाँ की,
करुण कहानी दुखसानी ।
रक्त - रंग से स्वयं काल ने,
रच रक्खी है मनमानी ॥
कितनी विधवायें अबलायें,
निज हृदयोदधि के मोती ।
नेत्राञ्जलियों से बिखरातीं,
फिर भी तृप्ति नहीं होती ॥
मज़दूरों ने पिघल पिघल कर,
अपना हृदय गला डाला ।
कृषकों ने निज रक्तपात से,
यहाँ बहाया है नाला ॥

मधुपीड़ा

रवि-किरणों से आँक रहा था,
स्वर्णिम सुखद कहानी।
कलियाँ मुसकाती जाती थीं,
बन बन कर दीवानी॥

मृदु - पल्लव द्रुम पुलक—
पुलक कर हीरक हार लुटाते।
अमल कमल दल छलक—
छलक अपना इतिहास सुनाते॥

मैं केवल उमंग के बल पर,
मचला हृदय सँभाले।
इस नन्हें से जीर्ण पात्र में,
प्रेमासव द्रव ढाले॥

पलकों ने पल में हँस हँस,
पथ पर पाँवड़े बिछाये।
हृदयोदधि से नेत्रांजलि ने,
मोती चुन बरसाये॥

ओस-बिन्दु-मय मृदु पराग से,
गलियाँ सुभग सिंचाई।
भव्य भावना-भ्रमरावलियों ने—
निज तान गुँजाई॥

मधुपीड़ा

T.V.

कभी प्रतीक्षा की उत्सुकता,
बेसुध करती आली ।
कभी वेदना आँखों की,
छलकाती पंकज - प्याली ॥

कितनी बीत गई जगते,
निर्मम चाँदी की रातें ।
शशि के उलझे किरण-जाल में,
उलझी मुदमय बातें ॥

असफलता के दुख - प्रहार से,
अनुनय - विनय हमारे ।
ठुकराये - टकराये से हैं,
सब के सब बेचारे ॥

जिस पर निज सर्वस्व लुटाया,
सुख - सम्पति दे डाली ।
उस ही के प्रतिफल में प्यारी,
पगली पीड़ा पाली ॥

इस पीड़ा के मधु मिठास को,
कैसे कौन बखाने ।
चखा जिन्होंने स्वाद नहीं,
वे हृदय - हीन क्या जानें ?

ग्राम-देवता

जिनके शोणित - सिंचन से,
है जीवन की हरियाली ।
उनको ही हमने हँस हँस,
निष्ठुर पीड़ा दे डाली ॥
शीत - घाम में निश्चल वे,
गलते हैं अंग तपाते ।
हिम-कण से ठिठुर ठिठुर कर,
श्रमकण से घुलते जाते ॥
उनके सूखे अंगों में,
चिन्ता का चित्रण देखा ।
उनके मुरझाये मुख पर,
है खचित हास्य की रेखा ॥
वे अपनी व्यथा छिपाये,
रहते हैं उर - कानन में ।
जो प्रकट नहीं हो पाती,
गंभीर धीर आनन में ॥

उस हृत्तल में जलती है,
दारुण दरिद्र की ज्वाला ।
जिसमें खेला करता है,
उनका जीवन मतवाला ॥

शिशु सिसक सिसक रोते हैं,
दाने दाने के लाले ।
मातायें मुख तकती हैं,
आरत हो हृदय सँभाले ॥

निर्झर से झर झर झरते,
भरते हैं दुख - दृग - प्याले ।
करुणा से फूट पड़े हैं,
उनके अन्तर के छाले ॥

साहस से ऋण ले ले कर,
पर-सुख-हित नित मरते हैं ।
चिर रक्तपात से अपने,
वे विश्व - उदर भरते हैं ॥

जिनने जग-सुख-हित अपने
स्वर्गीय सौख्य बाँटे हैं ।
उनके जीवन - पथ में हम,
बो रहे सदा काँटे हैं ॥

उपहार

इन निराश घड़ियों में,
मेरे हृद्‌तंत्री के हे मृदु तार।
आह! कौन करता है तुम पर,
दारुण दुख-प्रद घोर प्रहार?
करुण रागनी में अतीत की,
मृदुवर तान सुनाते हो।
टूटे-फूटे क्षीण स्वरों में,
सरस राग क्यों गाते हो?
विरस वेदना करुण-सिन्धु में,
गूँथ गूँथ कर मुक्ताहार।
काटे जग जग कर ही तुमने,
नीरव निशि-वासर बहु बार॥
ले मूक यंत्रणाओं को,
बिखरे जो नयनों के द्वार।
झीने से अंचल में ले लो,
व्यथित वेदना का उपहार॥

———

भेंट

उजड़े मानस - मन्दिर की,
वे भग्न कुटी में आये।
आशा में अलसाई थी,
अपने अरमान छिपाये ॥

सन्तापित ग्रीष्मातप से,
अभिलाष - लता मुरझाई।
कलियाँ कुछ कुछ झुलसी थीं,
कुछ कुछ थीं मृदु मुस्काई ॥

इन कुम्हलाई कलियों को,
उनका उपहार बनाना।
मैंने चाहा चुन चुन कर,
चरणों पर माल चढ़ाना ॥

इस तुच्छ भेंट को लेकर,
जब बढ़ न सकी उस पल में।
तब मूक यंत्रणा सहसा,
भर आई हृदयस्थल में ॥
इतने में सुरभित मलया-
निल का मृदु झोंका आया।
कलिकायें विकस उठीं सब,
फिर से नव जीवन पाया ॥
जब अर्पित करनी चाही,
कोमल चरणों में माला।
कर-कम्पन क्षीण स्वरों ने,
नीरस जीवन कर डाला ॥
आकुल आँखों ने दुख की,
फिर अविरल धार बहाई।
कुछ हृदय-वेदना उनमें,
तब उमड़ उमड़ कर आई ॥
जिस दुख से छलक रहा है,
मेरे जीवन का प्याला।
उसमें ही लहराती है,
मेरे सुमनों की माला ॥

———

वेदने !

इस उजड़े नीरव कानन में,
हे मेरे उर की झंकार ।
निरस हृदय की क्षीण वीण के,
छेड़ छेड़ टूटे से तार ॥

किसकी विरह वेदना की यह,
करुण कथा गा बारम्बार,
इस अतीत की मधुर स्मृतियों—
में सोये मन के उद्गार ?

उन्हें जगाती गूँज गूँज कर,
मूक यंत्रणा की गुंजार,
झरती निर्झर सी रस-धारा,
कर किस आशा का संचार ?

जग की निर्मम निष्ठुरता पर,
हृदय हार अकुलाती हो,
अथवा अपनी करुण कथा पर,
दुख से फूली जाती हो ?

———

अपनी टूटी आशाओं के,
लेकर टूटे - फूटे तार ।
कठिन यत्न से जोड़ जोड़ कर,
की क्षीण वीणा तैयार ॥

उन अतीत मधु स्मृतियों के,
रच रच कर कोमल मृदुगान ।
आज इसी में छेड़ूँगी मैं,
इस मुरझे जीवन की तान ॥

किन्तु आह तुम सुन न सकोगे,
मेरे मानस के उद्गार ।
चरण-कमल क्यों सहन करेंगे,
नयन-वृष्टि का पङ्किलभार ॥

यह मेरे सूखे उजड़े से,
कानन की हरियाली है ।
इसमें विषम वेदना बहती,
सरिता सी मतवाली है ॥

तुम्हें सुनाऊँ यदि अपने—
जीवन की करुण कहानी मैं ।
भय है कहते ही कहते कुछ,
हो न उठूँ दीवानी मैं ॥

——

व्यथा

सेवा की सुमनाञ्जलि ले कर,
भर कर मानस में उत्साह।
उन्हें मनाने चली प्रेम से,
छिपी हुई थी मीठी आह ॥
नहीं लालसा थी कुछ मुझको,
केवल दर्शन की थी चाह।
नीरवता के निर्जन वन में,
थी मन को किसकी परवाह ॥

जीवन की नीरस घड़ियों से,
खेल रहे थे हृदयोद्गार।
लेकर मूक यंत्रणायें कुछ,
छलक उठे नयनों के द्वार ॥

मन-मानस से कठिन यत्न कर,
जो अनगिनित बटोरे थे।
दृढ़ता की थीं सुघर ग्रन्थियाँ,
पड़े प्रेम के डोरे थे ॥

नेत्र-प्यालियों में संचित कर,
वे अद्भुत मोती दो चार।
अर्पण करने चली उन्हें मैं,
श्रद्धा का अनूप उपहार ॥

किन्तु आह! जब चाहा मैंने,
उनको माला पहनाऊँ।
चरणों पर सर्वस्व वार कर,
मैं न्योछावर हो जाऊँ ॥

आकुल से हो उठे नेत्र तब,
टूटे हृत्तंत्री के तार।
लड़ी झड़ी बन मिली धूल में,
बढ़ने लगा व्यथा का भार ॥

———

उलझन

आहों के उर - आँगन में,
उत्कण्ठा खेला करती ।
चाहों की चिनगारी से,
चिन्तायें चपल उभरतीं ॥
जीवन - सीमा - संगम पर,
पगली पीड़ा के मोती ।
झिलमिल निर्झर से झरते,
पल-पल में हलचल होती ॥
इस हलचल ही में भोली,
आशा भूली अपनापन ।
उन्मद मदिरा यों ढाली,
जिससे है बेसुध तनमन ॥
इनकी उलझी लड़ियों को,
मैं जितना सुलझाती हूँ ।
अधिकाधिक क्रमशः उनमें,
उलझी चली जाती हूँ ॥

———

शांति

हास्य-क्रन्दन से बुन बुन कर,
अमल जीवन का मृदु अम्बर,
इन्द्र-धनु से ले रंग नवल,
कौन रचता है हृत्पट पर?
दाह में शशि सा शीतलपन,
वेदना हिम-कण सी उज्ज्वल।
आह में सुरभित मन्द पवन,
व्यथा में भोली शांति सरल॥

अभिलाषा

उर-प्राङ्गण - बीच विलसती,
जिस जीवन की हरियाली ।
कण कण में जो भरता है,
प्राणों की छटा निराली ॥

निश्वासों के तारों में,
हँस हँस जो गाया करता ।
मेरे नीरव उपवन में,
अनुराग - राग है भरता ॥

जिस पर बुनती जाती हूँ,
जीवन का ताना - बाना ।
उसके उलझे तारों को,
प्रभु तुम सुलझाते जाना ॥

कुछ और नहीं इच्छा है,
बस बन्धु ! प्रेम के छींटे ।
दे दे कर करते रहना,
कड़ुये फल मेरे मीठे ॥

क्यों

क्यों चिर वियोग विधुरा सी,
रजनी बिलखाती जाती ?
क्यों अश्रु विन्दु से पल-पल,
हिम-कण छल-छल छलकाती ?

क्यों लिखतीं शत दल हृद पर,
रवि-किरणें करुण कहानी ?
क्यों-कहो बहा ले जाती,
मेरे मानस का पानी ?

निवासित नीड़ - विहंगम,
विच्छेद गान क्यों गाते ?
दुखिया की दुख - गाथा पर,
वे करुणा - स्रोत बहाते ?

ऊषा चित्रित करती है,
क्यों विगत प्रणय का नाता ?
क्यों देख अरुणिमा प्यारी,
बेहोश हृदय हो जाता ?

क्यों मुक्ताओं के बाँधे,
वरुणी ने बन्दनवारे ?
किसके स्वागत को खुलते,
अपलक अविचल दृग - द्वारे ॥

नैराश्य

पल - पल में बढ़ती आती,
है चिर वियोग की धारा।
जीवन तिनके सा बहता,
है दिखता नहीं किनारा।
करुणा - समीर उत्ताड़ित—
से ऊर्मि विकल हो जाती।
छन छन दुख की छलकन में
तड़फन अतृप्ति बन आती॥
हृदय-हिमाचल से गल गल कर,
अभिलाषा बढ़ आई।
बची-छिपी आशाओं को हा,
आज बहा ले आई॥
ओ नाविक! सुन्दरी न इसमें,
प्रणय तरी यह डालो।
डूबी जाती दृग - जल से ही,
इसको तनिक सँभालो॥

शीर्षक हीन

संकुचित हृदय लाई हूँ,
इस हेतु प्रेम के नाते।
दुखिया नीरस जन् जग के,
हैं त्राण तुम्हीं से पाते॥

निर्धन अति दीन दुखी हूँ,
क्या ले कर भेंट चढ़ाऊँ?
उलझे जीवन की लड़ियाँ,
किस भाँति प्रभो सुलझाऊँ?

मुरझाई आशाओं से,
यह गुथी प्रेम की माला।
सादर अर्पण करने को,
मन होता है मतवाला॥

पर कर-कम्पन ने मेरी,
आशा नीरस कर डाली।
करुणा से छलक पड़ी है,
निर्मित नयनों की प्याली॥

चरणों के नहलाने को,
कण ढलक ढलक कर आते।
इस मुग्ध प्रेम-पीड़ा से,
मुक्ता बन घुलते जाते॥

अतीत की झलक

वे मधु दिन अंकित थी जिनके,
स्वर्णाञ्चल में स्वर्णिम रेख ।
वे सुख घड़ियाँ थीं जीवन की,
जिनमें भाग्य भानु का लेख ।।

मन्द समीरण मुग्धमना सी,
हृदय-कुंज की कलियाँ पोष ।
पुलक पुलक थपकी दे दे कर,
भर जातीं मृदु मादक कोष ।।

अरुणोदय की नव लाली से,
अनुरंजित था मतवालापन ।
उषा-काल की मुद वेला में,
झाँक रहा था जीवन-धन ॥

मोती सा मंजुल प्रभात था,
सन्ध्या स्वर्णमयी आती ।
रजनी रजतहार उर पहने,
आती मृदु मुसकाती ॥

उडुगण ने मणिमय प्रकाश से,
मानस में की उजियाली ।
भाव-चन्द्र ने विमलकान्ति की,
हृदयभूमि पर निधि डाली ॥

हाय न दिखतीं अब मुझको वे,
गत जीवन की फुलझड़ियाँ ।
उन पर आँखें ढँके दे रहीं,
नव-निर्मित मुक्ता-लड़ियाँ ॥

पतझड़ में प्रभुवर क्या मेरा,
मधुवसंत फिर आएगा ?
तृषित चातकी के हित बोलो,
स्वाति-मेघ घिर आयेगा ?

———

वे दिन

वे मधु दिन जिनमें करती थी,
न्योछावर ऊषा लाली ।
वे शुभ घड़ियाँ जिन पर हँसती,
भाग्य-चन्द्र की उजियाली ॥
सोने के दिन और रात थी,
रजत रूप धर कर आती ।
मुक्ता मंजु प्रात भर जाता,
सुमनावलि मधु बरसाती ॥
तब तुम हे जीवन दिनेश !
निज रूप छटा थे छिटकाते ।
मुक्त राशि की विमल कान्ति सा,
मन्द हास मृदु भर जाते ॥
निर्मल नयनों की प्याली में,
लाली मदिरा मतवाली ।
छलक प्रेम से भर जाती थी,
कभी न होती थी ख़ाली ॥
मेरे जीवन का प्रभात था,
तुम से ही प्रतिभाशाली ।
तुमसे ही अनुराग-भरित थी,
कोमल हृत्-पंकज प्याली ॥

मैं सुख-सम्पति की विभूति पर,
फूली भूली सी आई।
था प्रकाश में अन्धकार यह,
हाय न इसको लख पाई॥

तब तुम मेरे लेश क्लेश पर,
द्रवित हृदय झुक झुक जाते।
मुग्ध मोहनी डाल प्रेम की,
सुधा-धार थे बरसाते॥

नेत्राम्बुज से सदा झलकता,
कृपा-भाव का कोमल कोष।
हृदय सुमन पर बरस बरस कर,
देते थे मुझको संतोष॥

मोचक कुञ्चित केश नाथ थे,
हृदय-देश को अति प्यारे।
उनकी छवि में उलझ-सुलझ थे,
जीवन-सुख तुम पर वारे॥

सोने से सपने जिनमें निज,
छवि से तुमने किया निहाल।
आज हाय! डस डस जाते हैं,
प्रियतम के घुँघराले बाल॥

inted by G. P. Srivastava Hindi Sahitya Press, Allahabad.